सद्गुरु तत्व बोध
SADGURU
TATV BODH

नई दिल्ली — श्री साई शके : 32
अंक — 126 — नवम्बर—दिसम्बर — 2013

।। ऊँ श्री साईनाथाय नमः।।

।। ऊँ श्री सद्गुरूनाथ दादाय नमः।।

Publisher
Sri Saikalp Adhyatm Sanstha
"Sai Niketan"
New Delhi - 110025
Ph. : 26956561
E.mail : saikalp@gmail.com
dadab6@gmail.com
Web : saishraddha-world.com

Patron
Lalita Bhavani Shankar Bhatte

Editorial
Vijay Kumar Varma
Jogesh Grover

Subscription
Inland
Yearly : Rs.250.00
Life time : Rs.1000.00

Overseas
Yearly : US$ 250.00
Life time : US$ 500.00

Printed By
Shaarp Advertising
Cell : 09810284136

Published Every Month
©All rights reserved with Publisher

गुरूबंधुभगिनीयों से,

वंदनीय दादा जी का गुरू पूर्णीमा पर उपदेश

गुरू पूर्णीमा का त्यौहार हम हर साल मनाते हैं। आज जो जन्म प्राप्त हुआ है, वह जन्म पुनः प्राप्त होगा या नहीं इसकी शाश्वती नहीं है, अगर जन्म प्राप्त हुआ तो भी पुनः गुरूप्राप्ति होगी या नहीं और हुई तो आगे के किस जन्म में होगी, यह जानना कठिन होता है। गुरूप्राप्ति होने पर उनकी कृपा से जन्म का सार्थक होता है, यह निर्विवाद सत्य है। लेकिन वर्तमान जन्म में गुरूभेंट होने तक जीवन का जो समय फिजूल खर्च हुआ, उसके बारे में यद्यपि आज हमें पश्चाताप होता है, तो भी ऐसा पश्चाताप करने का प्रसंग भविष्य के जन्म में न आने देने की खबरदारी कोई भी नहीं लेता। अनेक त्यौहार वर्षों तक जीवन में आते हैं, लेकिन उन त्यौहारों के दिनों का महत्व हम विचार में नहीं लेते। हर साल हम त्यौहार मनाते हैं, लेकिन उसका महत्व हमारे स्मरण में नहीं रहता है क्योंकि यह त्यौहार हर साल आते ही हैं। लेकिन जिस जीवन में ये त्यौहार मनाते हैं, वह जन्म फिर कब आयेगा, इस पर यदि हमने विचार किया तो "क्या हमने दशहरा और दीवाली सच्चे अर्थ में प्राप्त जन्म में मनाई?" यह सवाल अपने आप से करना पड़ेगा। इन त्यौहारों के समान ही गुरूपूर्णिमा भी हर साल आती है। यह गुरू के ऋणों को चुकता करने का दिन होता है। उस दिन हम गुरू की पूजा सिर्फ पैसों के माध्यम से करते हैं, लेकिन उससे गुरू का ऋण चुकता नहीं होता। जिनकी कृपा से हमें ज्ञान मिला, हमने नाम कमाया, इतना ही नहीं तो इस जन्म की सार्थकता कर सके, ऐसे गुरूऋण को चुकाना कदापि सम्भव नहीं है। अगर हम अपने प्राप्त जीवन का थोड़ा हिस्सा दूसरों के कल्याण के लिए खर्च करेंगे तो ही इस ऋण का थोड़ा अंश चुकता होगा।

मेरे जीवन में गत पचास वर्ष गुरूपूर्णिमा के दिन ही मैं दशहरा और दीवाली मनाता रहा हूँ। इस अवसर पर केवल बाल बच्चों को कपड़े, गहने ही नहीं दिये, तो सच्चे रूप में त्यौहार को मनाया और इस समय अपने आपसे प्रश्न किया कि "यद्यपि दशहरा मनाया जा रहा है लेकिन क्या जीवन में सीमा का उल्लघंन हुआ है? उसी प्रकार यद्यपि दिवाली मनाई गई तो भी जिस दुनिया में हम रहते हैं, उसे क्या "प्रकाश" यानि ज्ञान दे सके? इस प्रकार से जीवन जी सके इसलिए श्रीसदगुरू ने जो कृपा की है, वह दिन यानि गुरूपूर्णिमा हैं लेकिन यह अनुभव प्राप्त करने के लिए पचास वर्षों में गुरू को दक्षिणा के रूप में मैंने क्या दिया? इसके लिए अपना तन—मन—धन देना होता है। यहाँ धन का अर्थ पैसा नहीं है। पैंसो से जो खरीद ही नहीं सकते, वह सब गुरू को अर्पण करना है और जिस जगह मेरा मन जाता है वहाँ तेरा ही निजी रूप विद्यमान होता है यह प्रार्थना का संबोध जिस मन के प्रति हम कहते हैं वह मन भी गुरूचरणों में समर्पण करना होता है।

गत पचास वर्षों से मैंने एक ही गुरू का नाम लिया। उनका ही नाम स्मरण किया। जीवन में जो भी सुख—दुःख आये वह भी उनकी ही कृपा है। उनकी कृपा से जो कार्य आपके सामने

रखा है वह कार्य करने की प्रेरणा उन्होंने ही दी। तदनुसार उनकी आज्ञा को मैंने कृपा समझकर स्वीकार किया। जीवन के प्रारम्भ में ढाई साल तक माधुकरी भिक्षा मांग कर सेवा की। दूसरों की नजरों में वह दुःख है लेकिन आज जो सुख मुझे मिले उससे भी अधिक सुखी मैं उस समय था। मैंने माधुकरी उनके लिए मांगी क्योंकि भगवान के लिए भीख मांगने में असीम स्वाभिमान भरा है इसकी कल्पना कीजिये।

पचास साल में गुरूपूर्णिमा का दिन मैंने नित्य रूप से मनाया। गुरूपूर्णिमा का त्यौहार अन्य त्यौहारों से मुझे महत्वपूर्ण लगा। हर साल दशहरा और दीवाली का त्यौहार लोगों को प्रमुख लगते हैं। क्योंकि उस दिन खाने के लिए मिष्ठान मिलता है। इसके अलावा नये कपड़े और गहने भी लोग बनवाते हैं। दशहरा और दीवाली या त्यौहार भी मैंने मनाये, लेकिन वे गुरूपूर्णिमा के दिन आशीर्वाद लेकर मनाये। मेरे जगद्गुरू ने अपना नाम त्रिभुवन में अजरामर किया, वह दशहरा का दिन था। मैंने हर सवाल दशहरे के दिन परमपूज्य बाबा से यह मांगा कि दुनिया को सुखी बनाने का मुझे आशीर्वाद दो। सालों से समाज अंधविश्वास में जी रहा हैं उन्हे जीवन में दशहरे के दिन सीमोल्लघंन कीजिये। यही मांग आपके चरणों में जन्मभर मांगूगा जिससे समाज जागृत होकर आपके नामस्मरण में धुंद होगा। उसी प्रकार दिवाली मनाई और प्रार्थना की कि, भगवान ज्ञान दो। इस ज्ञान को अंधसमाज की दृष्टि प्राप्त कराइये। संसार को ज्ञानी यानि प्रकाशमय कीजिए। इतना मांग करते करते आज पचास साल बीते, तो भी दशहरा और दीवाली नहीं हो पाई है, ऐसा मैं कहता हूँ। तो गुरूपूर्णिमा कितनी दूर है इसका विचार करो।

इससे आगे सिर्फ गुरूपूर्णिमा ही मुझे नहीं मनानी है, बल्कि आने वाले दशहरा–दीवाली के त्यौहार मुझे गुरूकृपा से सारे संसार के लिए मनाने है। यदि अब आपको ध्यान में रखा तो ही सच्चे रूप में आपने गुरूपूर्णिमा मनाई ऐसा कहना सही होगा। गुरूकृपा का गुणगान और भाषण करते रहना, इसमें शताब्दियाँ बीत गई। लेकिन गुरू की कृपा गुणगान और भाषणों से सम्पादन नहीं होती। यह जीवन अपने लिए नहीं है। अपने लिए इस जीवन का सिर्फ चौथा हिस्सा यानि चार आने ही हैं तथा उर्वरित तीन–चौथाई हिस्सा यानि बारह आने दूसरों के लिए हैं। यह बारह आने जीवन का विनियोजन संसार के लिए किस प्रकार किया जा सकेगा, इसक बोध आप भक्त सज्ञान होकर लें, ऐसी प्रार्थना में परमपूज्य बाबा के चरणों में करता आ रहा हूँ। इसका कारण जो सृष्टि का सृजन हुआ है इस सृष्टि का शोध हम मानवों को अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है। प्राणियों की उत्क्रांति और मानव की उत्पत्ति, इस सम्बन्ध में शास्त्रज्ञों ने अनुसंधान किया है, लेकिन वे भी उस सम्बन्ध में निश्चित रूप से कुछ नहीं कहते हैं। "कर्मवाद" विषय हिंदू धर्म में है। पुनर्जन्म को खिस्ती लोग नहीं मानते। मुसलमान, जैन, बुद्ध इन्होंने अपने–अपने विचारों से इसमें विवाद निर्माण किया है तो भी निश्चित रूप से कोई भी कुछ नहीं कह सकता है या सिद्ध कर सकता है। पूर्व के युग में देवधर्म विषय अस्तित्व में आया लेकिन जिसे प्राप्त करना है, उसके लिए निश्चित रूप से क्या करना चाहिए? इस तरह के कठिन प्रश्न आज तक शास्त्रों के अनुसार सिद्ध करना किसी को भी सम्भव नहीं हुआ है। इसलिए परमपूज्य साईनाथ महाराज की कृपा से "मानवता युग" को निर्माण करने की जिम्मेदारी आज हम सेवकों की है। ऐसा कहना होगा। इसके लिए ऐसा शास्त्र शुद्ध मार्ग ढूंढ निकालना चाहिए कि जिससे किसी भी धर्म का विरोध न हो। कौन सा धर्म श्रेष्ठ है, उस सम्बन्ध में विवाद नहीं होना चाहिए। ऐसा साधन समाज के सम्मुख रखना चाहिये कि जिससे समाज का कल्याण होगा। मानव जीवन के पुराने मतों और नई विचारधाराएँ इन दोनों को स्वीकार्य होगा ऐसे साधन की खोज लेना आवश्यक है।

"कर्मवाद" का विचार किया तो कर्म का प्रारम्भ कहाँ से हुआ हैं इसको ढूंढना यह एक कठिन प्रश्न खड़ा होता हैं। कर्मवाद और कर्म के फल यह विषय तत्वज्ञान के रूप में विचार में लेकर आज तक कई युग समाप्त हुए, तो भी कर्म का प्रारम्भ कब और कहाँ से हुआ इसका निश्चय नहीं हो पाया। इस तत्वज्ञान के वाद–विवाद में पक्ष विपक्ष ने अपने–अपने मतों के समर्थन के लिए दलीलों की इतनी या अनगिनत टहनियाँ निकाली है कि क्या मानव की बुद्धि है भी या नहीं ऐसा विचार मन में आता है। इस खोजबीन का क्या कभी अन्त होगा या उसमें अपना ही अन्त होगा यही सवाल है।

सत्य है कि हरेक को अपने–अपने धर्म के अनुसार आचरण करना चाहिए, तो भी "धर्म" के अनुसार किस प्रकार आचरण होना चाहिए, इसका मार्गदर्शन करने वाली धर्मसंस्थाएँ अपने स्वार्थ के परे विचार नहीं करती। दूसरी बाजु समाज की है। आज धर्माचरण करने की बात सोची भी जाये तो अपनी मातृभाषा हम नहीं जानते, अगर जानते भी है, तो उसका अर्थ न समझने से अधिक गुत्था हुआ है। इस पर मन में यह विचार आता है कि समाज में धर्म के सम्बन्ध में इतना तत्वज्ञान किसलिये निर्माण हुआ है? क्या वह तत्वज्ञान एक दूसरे के प्रति द्वेष, विसंवाद आदि निर्माण करने के लिए सम्पन्न हुआ है? इसकी अपेक्षा प्राचीन युग के मानव जिन्हें हम जंगली, की संज्ञा से सम्बोधते हैं वे मन से तो भी सुसंस्कृत कहलाने के लिए आज मानव जीवन अज्ञानी है, यह कहना होगा कि उस अज्ञान का शाप हम भुगत रहें हैं। आज के समाज की स्थिति ऐसी है कि एक नास्तिक है, तो दूसरा आस्तिक और तीसरा दोनों को मानने वाला, यानि कहने को आस्तिक भी और नास्तिक भी। इस स्थिति में समाज का संविधान तब तक बदला नहीं जाता तब तक यह विवाद चलता ही रहेगा, क्या इसका अन्त तो भी अच्छा होगा? आज समाज का एक हिस्सा इहजन्म का विचार करता है, वह मुक्ति प्राप्त करने में व्यस्त है और अपने जन्म का कर्त्तव्य क्या है, यह सवाल अपने आप से नहीं करता है।

उपरोक्त विषय जिससे कि समाज इहलोक में सुख से रहे, इसलिए परमपूज्य साईनाथ महाराज ने अवतार कार्य किया। इस अवतार कार्य में भगवान सर्वव्यापी है और सबसे प्रेम करना यही मानव धर्म है, ये ही दो तत्व समाविष्ट हैं इन दोनों तत्वों का विचार कर उन्हें आचारण में लाया जाये तो किसी भी धर्म का तत्वज्ञान पर का अधिक विचार करने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक जन्म लेनेवाले मानव को इस "महामंत्र" से यह जागृति आयेगी कि, मेरे जन्म लेने का कर्त्तव्य मेरे जीवन में परमपूज्य बाबा की कृपा से घटित हो। आज तक साधकों ने और उपासकों ने "यह मंत्र श्रेष्ठ कि वह मंत्र श्रेष्ठ" यह विवाद चलाया परिणामवश जिनको सन्मार्ग की चाव थी, उनको योग्य दिशा की ओर जाने के लिए प्रकाश न दिखाते हुए जो जीवन पहले से ही अंधकारमय था, उनमें और एक मंत्र को ठूस दिया। प्रत्येक मंत्र का उच्चारण ऊँकार से होता है। अगर ऊँकार ही सिद्ध न हुआ, तो मंत्र का उच्चारण का कोई फायदा नहीं।

इसलिए परमपूज्य बाबा की कृपा से पहले ऊँकार मंत्र सिद्ध कर दिया। क्योंकि विश्व की उत्पत्ति का सूत्र इस ऊँकार में है। जब सृष्टि का निर्माण नहीं हुआ था, तब ऊँकार यानि "ध्वनि और प्रकाश" आस्तित्व में थे और आज भी हैं।

आज भी प्राप्त जन्म दुर्लभ है, उसमें आने वाली अड़चनों के कारण हम गुरूमार्गी हुए। इसलिए इहजन्म में गुरू से भेंट होकर उनके उपदेश के अनुसार साधन सेवा करने का जो लाभ हो रहा है, वह सेवा अड़चनों को ध्यान में रखकर करना उचित नहीं। अनेक भक्त दीक्षा को स्वीकार करते हैं। अड़चनों का निवारण होकर सुख मिले इसलिए साधना करते हैं। इसमें साधना विषय यद्यपि ईश्वर प्राप्ति का है, तो भी साधना करने वाला व्यक्ति ऐहिक सुख की प्राप्ति का विचार करता है, इसलिए ईश्वर प्राप्ति भी नहीं होती और अपेक्षित सुख भी नहीं मिलता। अगर केवल साधना ही करने का विचार मन में हो तो न मांगते हुए भी सुख प्राप्त होगा।

जन्म लेने पर हमारा सम्बन्ध केवल हम तक ही सीमित न रहकर दुनिया के साथ भी होता है। हमारे जीवन में जो भली–बुरी घटनाएँ होती है केवल उनका ही जो विचार हम करते हैं, इतना संकुचित विचार नहीं कराना चाहिए, अगर मैं अपना नुकसान करता हूँ तो मेरे जीवन में मेरा जो दुनिया से सम्बन्ध है उसका भी मैं भविष्य में नुकसान कर रहा हूँ। यह जिम्मदारी हमें ध्यान में लेनी है। पूर्व में अपने अड़चनों को सुलझाने के लिए प्रयत्न करते थे। इन प्रयत्नों के लिए जो इष्ट सेवा आपको सूचित की जाती थी उसके कारण अपने साधनसेवा को स्वीकार किया था। लेकिन इसके बाद आपको अपेक्षित सुख प्राप्त हुआ या नहीं इसका विचार न कर "मैं जो सेवा कर रहा हूँ। उसका लाभ मुझे नहीं हो रहा है, लेकिन अगर अन्यों को उसका लाभ हो रहा है तो इस कर्त्तव्य के बारे में मुझे सतर्क रहना चाहिये। ऐसा विचार इसके आगे रखना आवश्य है। आप भक्तों की जो ऊँकार साधना सूचित की गई है, उसमें केवल ईश्वर प्राप्ति इतना ही विषय नहीं हैं। यह विश्व हमने निमार्ण नहीं किया है, वह भगवान ने निर्माण किया है। उसके एक अंश के रूप में हमने जन्म लिया है। उसी प्रकार अनेक जीवों ने जन्म लिया है। इसलिए केवल एकाध साधन स्वीकारने से हमें ईश्वर प्राप्ति होनी चाहिए ऐसी अपेक्षा रखने के बजाय उसी तरह अन्यों को ईश्वर प्राप्ति क्यों नहीं होती? ऐसा प्रश्न मन में रखकर यदि साधना करेंगे तो वह अधिक फलदायी होगी।

यदि भूतकाल पर हम दृष्टिक्षेप करते हैं तो उसके अवलोकन में यह प्रश्न खड़ा होता है कि हम मानवों ने जीवन का उपयोग किस हेतु किया। उस काल में मानवों ने प्रचुर मात्रा में खाना–पीना, ऐश्वर्य और सुख में जीवन व्यतीत किया और समय बिताने के लिए धर्माचरण और देवतार्जन का मार्ग अपनाया। उसी प्रकार विज्ञानमार्ग और ज्ञानमार्ग को भी स्वीकार किया। लेकिन विज्ञानमार्ग का अधिक अवलम्ब करने से आज सैकड़ों वर्षों में हम मानवों की जो प्रगति हुई है, उसके फलस्वरूप यद्यपि जीवन, गतिमान हुआ है, तो भी हम प्रगति के पथ पर न होकर, एक न एक दिन इस विज्ञान की गति से केवल हमारे जीवन का ही नहीं सारे संसार का विनाश होने वाला है। वास्तव में ज्ञानमार्ग से दुनिया को संजाये रखकर संसार में शांति, सुख और समाधान सब को प्राप्त हो यह धारणा मूल विषय में थी। लेकिन आज प्रगति की प्रतियोगिता एक दूसरे में चल रही है और विज्ञान में सारा विश्व व्याप्त है। यह प्रतियोगिता रात–दिन चल रही है, किसी को भी मानव जीवन के प्रति आस्था नहीं है। जन्म लेने से पहले ही उसकी मृत्यु किसमें है या कैसे होगी इसकी खोज की जा रही है। जन्म लेना कितना महत्वपूर्ण है, इस विषय का कोई भी अध्ययन नहीं करता। मानव जीवन की प्रगति का अर्थ यह है कि जीवन में आचार–विचार और उपचार का कार्य समान रूप से होना चाहिये। वैसा होने पर ही हमें सुख प्राप्त होगा। लेकिन आज सबदूर विचार और अतिविचार की ही क्रिया होने से, मानव के मन का अस्तित्व ही नहीं रहा। परिणामस्वरूप मन के आविष्कारों की जो क्रिया यानि दया, क्षमा, शांति का अस्तितव किसी भी मानव में दिखाई नहीं देता।

मनुष्य के जीवन में काया, वाचा और मन कह अवस्थाओं का कार्य समान रूप से होता होगा तो मानवी जीवन सुख–शांति–समाधान का लाभ लेता रहेगा। लेकिन विज्ञानशास्त्रधार से केवल यह अवस्था का विकास और उसकी गति इतनी हुई है कि उसके कारण आबालवृद्धो तक आज किसी में भी स्थिरता न होकर मन की एकाग्रता या शांति भी अनुभव नहीं होती है। संसार में शांति हो इसलिए ज्ञानी और अज्ञानी इन दोनों ही वर्गों के प्रयास चल रहे हैं और अपनी ओर से दोनो प्रयत्नशील है।

दुनिया में शांति हो यद्यपि यह इन प्रयासों का एक मात्र विषय है, तो भी इस विषय के भिन्न–भिन्न अंग, जिससे शांति निर्माण होगी वह तत्वज्ञान, आचार–विचार और रूढ़ी परम्पराओं के द्वारा अपनाये गये होने से इस बीसवी सदी में हम उससे ग्रसित हैं, इसलिए केवल शांति हो, ऐसा शब्दों में व्यक्त किया जाने से वह नहीं होती। जब तक हम एक–दूसरे को विभिन्न स्तर पर रखकर, विभिन्न आचार–विचार और रूढ़ी परम्परा से व्यवहार करते हैं, जीते है, तब तक शांति देखने को नहीं मिलेगी। इसके लिए प्रथम परम पूज्य साईनाथ महाराज ने बताया है कि किसी भी धर्म के, किसी भी देवता के, किसी भी आचार–विचार के उपासक हो, उसकी कर्मठता का समाज में प्रचार न कर, अगर प्रथम हम इस संसार में एक दूसरे को "विश्वबंधुता" के रिश्ते से नहीं पहचानेंगे और तदनुसार विश्वबंधुता का प्रेम निर्माण नहीं करेंगे, तो इस संसार में सुख–शांति का लाभ न होकर उसका अन्त अज्ञान से प्रलय में होगा यह निर्विवाद सत्य है।

जब से विश्व का निर्माण हुआ है तब से मनुष्य के कल्याण के लिए अनेक अवतार भगवान ने लिए हैं। अगर उसमें से एक को हम मानते हैं, तो दूसरों का अनादर होता है, यह बात नहीं है। बीसवीं सदी में हमको ऐसा विचार करना चाहिये कि जो अनादि अनन्त भगवान एक ही है, जनकल्याण के लिए वह बार–बार अवतार लेता है। यानि अवतार कार्य का सूत्र उत्पत्ति, स्थिति और लय या त्रिमूर्ति (Power of Trinity) के अधीन होकर, इसके अतिरिक्त कोई भी चौथी शक्ति अवतार के रूप में जन्मी नहीं है अनादि अनन्तकाल में हुए अवतारी पुरूषों के प्रति यद्यपि आदर है, तो भी बीसवीं सदी के ईश्वरीय अवतार ने इस संसार के वर्तमान परिस्थिति का विचार किया, ऐसे दिव्य अवतार का विचार हम ईश्वर भक्त बनने वाले भक्तभाविकों को करना चाहिए।

हे मेरे प्यारे भक्तों उपरोक्त निवेदन में मैंने आपके अज्ञान सम्बन्धी या आप अपना जीवन अज्ञान में व्यतीत कर रहे हैं, उसके बारे में आस्थापूर्वक जो चार शब्द सद्गुरूकृपाशीर्वाद से आपके सम्मुख रखें हैं, उसके पीछ जन्म–जन्म तक मुझ पर जिसकी अखंड कृपा हुई है, उनकी कृपा के कारण मैं आप सभी से ज्यादा ज्ञानी और सज्ञानी हुआ हूँ, ये मेरा कहने का हेतु नहीं है। मैं आजतक भगवान

में अनन्य भक्तिभाव से यही मांगता रहा हूँ कि "भगवान आपने मुझ पर अखंड कृपादृष्टि रखकर जगत्कल्याण का कार्य करने का उचित मौका मुझे दिया है, वह कार्य निःस्वार्थ, निरपेक्ष बुद्धि से मुझसे करा लें। लेकिन की गई सेवा का मुझ में थोड़ा–सा भी अंहकार निर्माण न होने दें। छोटे से छोटा ऐसी अज्ञानी बालरूप मुझे देकर मुझ से की गई सेवा का आनन्द मुझे प्राप्त जन्म में अनुभव होने दें। "आज गत पच्चीस वर्ष, मेरा प्राप्त जीवन आप भक्तों के कल्याण के लिए जो व्यतीत किया है, उसकी इतिसार्थकता भगवान की कृपा से समय–समय पर तो हुई ही है, किन्तु इसके अलावा भगवान ने मुझे कृपाशीर्वाद देकर सार्थक किया है, उस कृपाशीर्वाद की साध्यसिद्धता करने का लाभ आपके जीवन की अड़चनों का निवारण करने के लिए आपने मेरे जीवन के साथ सहचार्य होकर मुझे दिया, उसके कारण ही मैंने आज इस दुनिया में नाम कमाया है यह मान लेने पर भी आपने अपने जीवन को सुख–दुःख का बहुमूल्य हिस्सा मेरे कल्याण के लिए दिया, इसलिये उदार मन से मैं आपका आभारी हूँ।

ऊपर लिखित निवेदन आप भक्तों के कल्याण के लिए और भावी जन्म का इंतजाम करने के लिए गुरूकृपाशीर्वाद के प्रतीक के रूप में आपको सादर समर्पित कर रहा हूँ। इस कृपाशीर्वाद के प्रतीक में निराकरण, निवारण और आचरण का उल्लेख केवल शाब्दिक रूप में न होकर, जो "निराकरण, निवारण और आचरण पद्धति" का उपचार सूचित किया गया है वह सब सर्वसिद्ध साधन मैंने अपने सिद्धसाधन मार्ग की पुण्यविभूतियों को "औपचार" के रूप में अर्पण किया है। इसलिए स्वाभाविक रूप से सर्व निराकरण सर्वसिद्ध होकर सुलभ, सरल आचार विचारों से इस जन्म में और आगे जन्म–जन्म तक उनका लाभ सभी इच्छुकों को सहज रूप से मिलता रहे। ऐसी भक्तिभावपूर्ण इच्छा सभी विभूतियों के चरणों में आपादमस्तक रखकर व्यक्त कर रहा हूँ।

यह "गुरूप्रसाद" आज आपको गुरूकृपाशीर्वाद के रूप में भेंट किया गया है, उसे आप आस्थापूर्वक पढ़कर अपने परिवार के बाल बच्चों से लेकर बुजुर्गो तक सभी व्यक्तियों को निवेदन करें। इसके पीछे सद्हेतु यह है कि जिनकी बाल्यावस्था है उनके प्राप्त जन्म का विकास योग्य मार्ग से तो होगा ही, लेकिन जिनकी वृद्धावस्था है उनको भी पारमार्थिक ज्ञान प्राप्त होने का समाधान इहजन्म में होगा। बाल अवस्था में तथा वृद्धावस्था में स्थित हम सभी मानवों का तारक यह गुरूप्रसाद जो आज गुरूआज्ञा से लिखने का सौभाग्य मुझे मिला है, यह गुरूप्रसाद में उन वरिष्ठ और श्रेष्ठ सभी सिद्धसत्पुरूषों के चरणों में सभी भक्तभाविकों के भक्तियुक्त श्रद्धाभाव के प्रतिक और आदर के रूप में अर्पण कर रहा हूँ।

आप भक्तों के साथ गत पच्चीस वर्ष इस सेवा में व्यतीत करने पर, आप भक्तों से भक्तिभाव से आखिरी एक ही मांग कर रहा हूँ कि यह जो कार्य गुरूआज्ञा से मैंने आप भक्तों के कल्याण के लिए खड़ा किया है, वह कार्य केवल मेरी इच्छा का विषय नहीं था और उससे मुझे इस जन्म में आनन्द या श्रेष्टता कमाने का मेरा हेतु नहीं था। जन्म–जन्म तक मेरे माध्यम को उपासना दिक्षा से लेकर सिद्धावस्था तक जिन्होंने समय–समय पर मुझे साथ देकर सर्वसिद्ध किया, ऐसे मेरे पुण्य के कृपाशीर्वाद का यह मंदिर है। इस मंदिर की यथोचित पवित्रता रखना और उसका उचित लाभ दुनिया के अन्य लोगों को करा देना यह जैसा आपका कर्त्तव्य है, उसी प्रकार इस कार्य के लिए मुझसे लेकर नियुक्त सेवकों तक, जिनकों इस कार्य में सहयोग करने के लिए भगवान ने नियुक्त किया है, ऐसे लोगों को इस कार्य सम्बन्धी योग्य भूमिका और उस भूमिका के अनुसार आचारण और विचार, अगर भूल से भी अयोग्य मार्ग पर जा रहे हो तो उनको इसका अहसास करा देने का इष्ट कर्त्तव्य, करना आप कदापि न भूलें इतनी ही आप सब से मांग है, आप भक्तों के कल्याण के लिए यह कार्य जिन महान तथा आलैकिक पुण्य विभूतियों के कृपाशीर्वाद से चल रहा है और जिनके कृपाशीर्वाद का लाभ आप भक्तों ने लेकर, प्राप्त जीवन में सुख–शांति–समाधान जैसे ऐहिक सुख का लाभ किया है, साथ ही आप भक्तों को न मांगते हुए परमार्थिक सुख का भी लाभ हुआ है, उन महान पुण्य विभूतियो का हम भक्त पर अनन्त उपकार हैं। आज उनके चरणों में यह प्रार्थना करेंगे कि, "आज हम गुरूभक्त पुण्यविभूतियों के चरणों में विनम्र भाव से यह प्रार्थना कर रहे हैं कि हम मानवों को प्राप्त जन्म का ज्ञान हो और प्राप्त जन्म में सुख, शांति, समाधान और परोपकार करने का इष्ट कर्त्तव्य हम से होता रहे, ऐसी शिक्षा अनादि काल से आजतक समय–समय पर अवतार लेकर हम मानवों को अपने दी। किन्तु इहजन्म में जो कर्त्तव्य हम मानवों को करना आवश्यक है, उन्हें भूल जाने से आज दुनिया की स्थिति बहुत विकट बनी है। उसमें आवश्यक परिवर्तन लाने का काम आपके कृपाशीर्वाद होकर, सरल से सरल मार्ग हम मानवों को सूचित किया है। ऐसे मार्ग का अवलम्ब और कर्त्तव्य हम से निःसकोंच होता रहे और इस सुखशांति का लाभ हमारे जीवन में हो और ईश्वरप्रणीत मानव जीवन आदि का लाभ होता रहे, ऐसी आपके चरणों में प्रार्थना है।"

आज तक मानव कल्याण के लिए जो साधन परमपूज्य साईनाथ महाराज ने सिखाई है, उस सम्बन्ध में हम उनके जन्म–जन्म तक ऋणी रहेंगे। पुनश्च ऐसा अपराध और प्रमाद हम से न हो, ऐसी सुबुद्धि परमपूज्य सद्गुरू साईनाथ महाराज, श्री नवनाथ आदि विभूतियाँ और देवताएँ हमें और हमारी भावी पीढ़ियों को दें ऐसी अनन्य भाव से प्रार्थना कर रहे हैं।"

शुभं भवंतु **जनम जनम का सेवक**

विनम्र निवेदन

अति हर्ष के साथ आप सभी गुरुबंधु एवं भगिनियों को सूचित किया जाता है कि मासिक पत्रिका "तत्व बोध" का आगामी अंक एवं अन्य सूचना वेबसाइट पर एवं मेल द्वारा प्रेषित की जाएगी। अतः आप सभी गुरुबंधु एवं भगिनियों से अनुरोध है कि आप सभी अपना ई–मेल पता एवं अन्य जानकारी यथाशिघ्र निम्न पते पर प्रेषित करें :

Sri Saikalp Adhyatm Sanstha
"Sai Niketan"
5, Jasola Vihar, New Delhi - 110025 Telephone : 26956561
E-mail : saikalp@gmail.com, dadab6@hotmail.com